प्रकाशन हेतु अनुमोदित

माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष

बिलासपुर (छ.ग)

रिट याचिका संख्या 2669/2004

याचिकाकर्ता – मनजीत सिंह जब्बल पिता हरभजन सिंह जब्बल, बर्खास्त परिचालक, म.प्र.राज्य सड़क परिवहन निगम रायपुर डिपो नंबर 2 मौलीपारा मंदिर के पास, रविग्राम, रायपुर छत्तीसगढ

बनाम

उत्तरदातागण – 1. म.प्र. राज्य सड़क परिवहन निगम द्वारा प्रबंध निदेशक, मुख्यालय, हबीबगंज, भोपाल [म.प्र.]

2. डिपो मैनेजर [पूछताछ) तृतीय म.प्र. राज्य सड़क परिवहन निगम, मुख्यालय, हबीबगंज, भोपाल [म.प्र.]

3. प्रबंध संचालक, छत्तीसगढ़ राज्य अधोसंरचना विकास निगम, रायपुर [छ.ग.]

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत रिट याचिका

उच्च न्यायालय बिलासपुर (छ.ग.)

रिट याचिका संख्या 2669/2004

मनजीत सिंह

बनाम

म.प्र. राज्य सड़क परिवहन निगम एवं अन्य

आदेश

27.01.2005 के लिए सूची बहर

सही/

सुनील कुमार सिन्हा

न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

उच्च न्यायालय बिलासपुर (छ.ग.)

रिट याचिका संख्या 2669/2004

मंजीत सिंह

बनाम

म.प्र.राज्य सड़क परिवहन निगम

एवं अन्य

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता श्री सचिन सिंह राजपूत

आदेश

(27.01.2005)

सुनील कुमार सिन्हा, न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

वर्तमान याचिका भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत औद्योगिक न्यायालय, रायपुर (छ.ग.) द्वारा सिविल अपील संख्या 408/एमपीआईआर /ए–II/2002 में पारित दिनांक 17.3.2004 (अनुलग्नक पी–13) के आदेश की वैधता, विधिमान्यता और औचित्यता को चुनौती देते हुए दायर की गई है। विद्वान औद्योगिक न्यायालय ने उक्त आदेश द्वारा श्रम न्यायालय, रायपुर द्वारा प्रकरण संख्या 31/एमपीआईआर/92 में पारित आदेश दिनांक 17.12.2002 (अनुलग्नक पी–12) के विरुद्ध याचिकाकर्ता द्वारा दायर अपील को ख़ारिज कर दिया है।

(2) मामले के तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता ने श्रम न्यायालय, रायपुर के समक्ष मध्य प्रदेश औद्योगिक संबंध अधिनियम 1960 की धारा 31(3) सहपठित धारा 61 के तहत एक आवेदन यह अभिकथित करते हुए प्रस्तुत किया था कि वह वर्ष 1980 से उत्तरवादियों की स्थापना में परिचालक के रूप में काम कर रहा था और उसे उत्तरवादी संख्या 2 के आदेश संख्या 203, दिनांक 31.8.1991 (अनुलग्नक पी–8) द्वारा सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था। आगे अभिकथन यह है कि उसके खिलाफ विभागीय जांच की गई थी और उत्तरवादी संख्या 2 ने कदाचार का निष्कर्ष दर्ज करने के बाद उसे बर्खास्त कर दिया था। उन्होंने आगे अभिकथन किया कि उपरोक्त विभागीय जांच विधि के अनुसार नहीं की गई थी क्योंकि प्राकृतिक न्याय के मौलिक सिद्धांतों का अनुपालन

नहीं किया गया था और वास्तव में, उन्हें उक्त जांच में सुनवाई का कोई अवसर नहीं दिया गया था। उन्होंने उपरोक्त आदेश को ख़ारिज करने और पिछले वेतन के साथ बहाली किये जाने हेतु भी प्रार्थना की।

(3) याचिकाकर्ता द्वारा विभागीय जांच से संबंधित दस्तावेज भी प्रस्तुत किए गए हैं। उपरोक्त दस्तावेजों से पता चलता है कि दिनांक 12.3.1991 को याचिकाकर्ता एम.पी.एस. आर.टी.सी. बस क्रमांक 7588 में परिचालक के के रूप में कार्यरत था, जो रायपुर से फिंगेश्वर तक चलती थी। बस को चेकिंग पार्टी ने रोका तथा जांच करने पर पाया कि बस में बैठे 15 यात्रियों में से 10 यात्री बिना टिकट यात्रा कर रहे थे। जांच करने पर यह भी पाया गया कि याचिकाकर्ता ने उक्त यात्रियों से किराया तो वसूल लिया था, परंतु उन्हें टिकट जारी नहीं किए गए थे। मामले में संज्ञान लिया गया तथा जांच अधिकारी द्वारा दिनांक 02.4.1991 को याचिकाकर्ता को आरोप पत्र क्रमांक 633 द्वारा जारी किया गया। आरोप पत्र की प्रति अनुलग्नक पी–1 के रूप में प्रस्तुत की गई है। आरोप पत्र आरोपों के विवरण का खुलासा करता है और यह भी खुलासा करता है कि याचिकाकर्ता का कृत्य इस मामले में लागू स्थायी आदेश के खंड 12(1)(बी)(डी)(एफ) के तहत गंभीर कदाचार था। याचिकाकर्ता द्वारा उपरोक्त आरोप पत्र का जवाब प्रस्तुत किया गया था, जिसकी प्रति अनुलग्नक पी–2 के रूप में दायर की गई है। रिट याचिका के साथ दायर दस्तावेजों से पता चलता है कि साक्ष्य आदि भी जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए थे और जांच पूरी होने के बाद याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप साबित पाए गए थे। इसके बाद, 31.5.1991 को याचिकाकर्ता के खिलाफ उक्त स्थायी आदेश के खंड 12(3)(बी)(6) के तहत घोर कदाचार का दोषी मानते हुए बर्खास्तगी का आदेश पारित किया गया था। इसके बाद, याचिकाकर्ता ने एम.पी.आई.आर. अधिनियम की धारा 61 सहपठित धारा 31(3) के तहत एक आवेदन दायर करके उपरोक्त आधारों पर श्रम न्यायालय के समक्ष उक्त आदेश की वैधता और विधि मान्यता को चुनौती दी।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

श्रम न्यायालय द्वारा नोटिस जारी किए जाने के बाद उत्तरवादियों ने भी अपना लिखित कथन दाखिल किया। श्रम न्यायालय ने इस मामले में 3 विवाघक तय किए, जो इस प्रकार हैं:

"1. क्या आवेदक के विरूद्ध की गई विभागीय जांच प्राकृतिक न्याय सिद्धांत के अनुरूप न होकर अवैधानिक है?

2 क्या आवेदक वादोत्तर में वर्णित दुराचरण का दोषी होकर उसे दिया गया दंड उचित एवं वैध है?

3. सहायता एवं व्यय?"

विवाघक संख्या 1 को प्रारंभिक विवाघक माना गया और दोनों पक्षों को सुनवाई का उचित अवसर दिए जाने के बाद, 21.8.2000 के आदेश द्वारा इसे निर्णीत किया गया, जिसे अनुलग्नक पी–11 के रूप में दाखिल किया गया है। उक्त आदेश द्वारा जांच को अवैध माना गया। इसके बाद, श्रम न्यायालय द्वारा जांच की गई। अभिलेख पर मौजूद सभी साक्ष्यों और दस्तावेजों पर विचार करने के बाद, श्रम न्यायालय ने अन्य दो विवाद्यकों को याचिकाकर्ता के खिलाफ निर्णीत किया और यह माना गया कि याचिकाकर्ता कदाचार का दोषी है और अंततः याचिकाकर्ता द्वारा दायर आवेदन को खारिज कर दिया गया।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(4) इस तथ्य का उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि आदेश पारित करते समय श्रम न्यायालय ने याचिकाकर्ता के पिछले इतिहास पर भी गौर किया। आदेश में उल्लेख किया गया है कि इससे पहले भी, प्रकरण संख्या 17/1986 एमपीआईआर के तहत याचिकाकर्ता पर 300 रुपये का जुर्माना लगाया गया था, क्योंकि वह बिना टिकट के 3 यात्रियों को ले जा रहा था। श्रम न्यायालय के आदेश में इसी तरह की अन्य घटनाओं का भी उल्लेख किया गया था और उसके बाद ही श्रम न्यायालय ने उपरोक्त आदेश पारित किया।

श्रम न्यायालय द्वारा पारित उक्त आदेश के विरुद्ध याचिकाकर्ता ने औद्योगिक न्यायालय के समक्ष उक्त अधिनियम की धारा 65 के अन्तर्गत एक आवेदन प्रस्तुत किया तथा औद्योगिक न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों एवं दस्तावेजों की जांच करने के पश्चात अपील को ख़ारिज कर दिया तथा श्रम न्यायालय द्वारा पारित आदेश की पुष्टि की।

(5) याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश अनुचित है और विचारण न्यायालय ने याचिकाकर्ता को गंभीर

कदाचार का दोषी ठहराकर विधि की भूल की है। घरेलू जांच अवैध पाए जाने के बाद श्रम न्यायालय द्वारा नए सिरे से जांच की अनुमति नहीं थी और याचिकाकर्ता को दी गई शास्ति भी अनुपातहीन है।

(6) मैंने विद्वान अधिवक्ता को विस्तार से सुना है तथा रिट याचिका के साथ दायर अभिलेखों का भी अवलोकन किया है।

(7) यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत किसी मामले से निपटते समय, हालांकि उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय और न्यायाधिकरणों को उनके अधिकार की सीमाओं के भीतर रखने और यह देखने के लिए बाध्य है कि वे विधिक तरीके से उनसे अपेक्षित या आवश्यक कर्तव्य निभाते हैं, लेकिन उच्च न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों या न्यायाधिकरणों के अधिकारिता की सीमाओं के भीतर किए गए सभी प्रकार की कठिनाई या गलत निर्णयों को ठीक करने का कोई असीमित विशेषाधिकार नहीं है। न्यायालयों या न्यायाधिकरणों के आदेशों के साथ शक्ति का प्रयोग और हस्तक्षेप कर्तव्य की गंभीर उपेक्षा और विधि या न्याय के मौलिक सिद्धांतों के घोर उल्लंघन के मामलों तक ही सीमित है, जहां यदि उच्च न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करता है, तो गंभीर अन्याय बिना सुधारे रह जाता है। यह भी सुस्थापित है कि वास्तव में, इस अनुच्छेद के तहत कार्य करते समय उच्च न्यायालय अपीलीय न्यायालय के रूप में अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता है या अपने स्वयं के निर्णय को अधीनस्थ न्यायालय के निर्णय के स्थान पर किसी त्रुटि को सुधारने के लिए, जो अभिलेख पर स्पष्ट नहीं है, प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है। उच्च न्यायालय किसी विचारण न्यायालय या न्यायाधिकरण के तथ्यों के निष्कर्षों को अपास्त या अनदेखा कर सकता है, यदि उसे उचित ठहराने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है या निष्कर्ष इतना विकृत है, कि कोई भी युक्तियुक्त व्यक्ति संभवतः ऐसे निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता है जिस पर न्यायालय या न्यायाधिकरण पहुंचा है। **[देखें (2001) 8 एससीसी पी.97 [एस्ट्राला रबर–वी दास एस्टेट (पी) लिमिटेड)।**

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

[(2001) 8 एससीसी 477] में प्रकाशित सुगरबल एम. सिद्दीक और अन्य बनाम रमेश एस. हंकारे (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि में प्रतिपादित विधि के एक स्थापित सिद्धांत के रूप में कि संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत एक याचिका में, उच्च न्यायालय को यह देखना होगा कि क्या विचारण न्यायालय या न्यायाधिकरण के पास मामले से निपटने की अधिकारिता है और यदि हां, तो क्या आक्षेपित आदेश प्रक्रियागत अनियमितता से दूषित हो गई है दूसरे शब्दों में, न्यायालय का संबंध निर्णय से नहीं बल्कि निर्णय देने की प्रक्रिया से है।

(8) इन सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए यदि हम याचिकाकर्ता के मामले का परीक्षण करें तो ऐसा प्रतीत होता है कि सबसे पहले याचिकाकर्ता को विभाग द्वारा सुसंगत स्थायी आदेश के निर्दिष्ट प्रावधानों के तहत आरोप पत्र दिया गया और उसके बाद उससे जवाब लिया गया और उचित जांच के बाद तथा सुनवाई का अवसर देने के बाद बर्खास्तगी का आदेश पारित किया गया। यह प्रथम दृष्टया मामला है। हालांकि, जब मामला श्रम न्यायालय के समक्ष आया तो उक्त न्यायालय ने विवाद्यक विरचित करने के बाद विवाद्यक संख्या 1 को प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में लिया गया और पक्षों की सुनवाई के बाद जांच को अवैध माना गया और न्यायालय ने स्वयं मामले की जांच की और उसके बाद केवल आरोपों को साबित माना गया। ये तथ्य यह दर्शाते हैं कि श्रम न्यायालय ने मामले को स्वतंत्र रूप से निपटाया और पक्षों के तर्कों और साक्ष्यों के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि याचिकाकर्ता गंभीर कदाचार का दोषी है। यह निष्कर्ष एक तथ्यात्मक निष्कर्ष है और याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्रम न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए उपरोक्त निष्कर्ष में किसी भी प्रकार की विकृति को इंगित करने में विफल रहे।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(9) श्रम न्यायालय के स्वयं जांच करने की अधिकारिता के बारे में, 1969 में एमपीएलजे पृ. 132 में प्रकाशित मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खंड न्याय – पीठ (**जगत सिंह चौधरी बनाम एमपी इलेक्ट्रिसिटी बियर्ड, जबलपुर व अन्य)** के निर्णय के बाद शायद ही कोई संदेह हो सकता है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि सेवा समाप्ति के परिणामस्वरूप की गई घरेलू जांच दोषपूर्ण पाई जाती है, तो श्रम न्यायालय स्वयं जांच कर सकता है और सेवा समाप्ति के आदेश को यथावत रख सकता है।

(10) अब अनुपातहीन शास्ति के प्रश्न पर आते हैं, **एआईआर 2003 एससी 1462** में प्रकाशित **क्षेत्रीय प्रबंधक, यूपीएसआरटीसी, इटावा और अन्य, अपीलकर्तागण –**

बनाम होतीलाल और अन्य, उत्तरवादीगण मामले में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय संदर्भित किये जाने योग्य है। सर्वोच्च न्यायालय ने अवधारित किया है कि यदि कोई बस परिचालक बिना टिकट यात्रियों को ले जाता हुआ पाया जाता है और उसे घोर कदाचार/कर्तव्य की अवहेलना का दोषी पाया जाता है, तो उसके साथ नरमी से पेश नहीं आया जा सकता। बस परिचालक एक ऐसा व्यक्ति है जो सार्वजनिक धन से संबंधित काम करता है और एक भरोसेमंद व्यक्ति की हैसियत से काम करता है। उच्चतम स्तर की निष्ठा और विश्वसनीयता अनिवार्य और अपवाद रहित है। यदि विस्तृत और निष्पक्ष जांच के बाद अभिकथन साबित हो जाते हैं, तो बर्खास्तगी का आदेश असंगत आदेश नहीं है।

(11) सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए उपरोक्त निर्णयों तथा श्रम न्यायालय और औद्योगिक न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों और याचिकाकर्ता के खिलाफ साबित किए जाने वाले आरोपों की प्रकृति तथा विशेष रूप से उसकी सेवा के पिछले इतिहास को देखते हुए, मुझे उक्त न्यायालयों के आदेशों में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं दिखता। मैं याचिका में कोई गुणानुगुण नहीं पाता हूँ याचिका को प्रारम्भिक सुनवाई के प्रारंभिक स्तर पर पर ही ख़ारिज किया जाता है। व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

सही

सुनील कुमार सिन्हा

न्यायाधीश

27.01.2005

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By Ms. Yogita Naik, Advocate